इकाई VI

ऋण तथा ऋत (Rina and Rita) —

ऋण- वैदिक काल में तीन प्रकार के ऋणों की कल्पना की गई थी जिनसे मुक्त होना प्रत्येक प्राणी का कर्तव्य था। ये ऋण है- देवऋण, पितृऋण और ऋषिऋण। देवऋण से मुक्ति देवताओं को यज्ञ में हविष प्रदान करने से होती है। पितृऋण से मुक्ति के पुत्र की उत्पत्ति कुल नाति वंशवृद्धि होता रहे तथा ऋषिऋण का अर्थ है ऋषियों अथवा गुरुजनों के प्रति ऋणी होना जिससे मनुष्य केवल उनके सिद्धांतों को प्रचारित करे।

or ऋण- वैदिक युग के कर्तव्य की धारणा को ऋण कहा गया है। ऋण तीन है- देवऋण, ऋषिऋण तथा पितृ ऋण। प्रत्येक द्विज द्वारा इससे मुक्ति क्रमशः शास्त्रों के अनुकूल यज्ञ, ब्रह्मचर्य एवं विद्याध्ययन तथा संतानोत्पत्ति द्वारा पूरा किया जाता है।

ऋत — वेद में सत् को नैतिक नियम की दृष्टि से ऋत कहा गया है। प्रथमतः ऋत का प्रयोग प्राकृतिक व्यवस्था तदनन्तर नैतिक व्यवस्था के लिए किया गया। देवताओं को ऋतजात, ऋतवृध एवं ऋतस्य गोप कहा गया है। यह कर्मसिद्धान्त का आधारभूत है। षड्दर्शन में न्याय दर्शन में इसे ही अदृष्ट तथा मीमांसा दर्शन में अपूर्व कहा गया है। 'ऋत' समस्त जगत का आधार है। यह नित्य और सर्वव्यापी नियम है।

पुरुषार्थ (Purushartha) :—

पुरुषार्थ दो शब्दों 'पुरुष' और 'अर्थ' के संयोग से बना है। 'पुरुष' का अर्थ विवेकशील प्राणी तथा 'अर्थ' का मतलब 'लक्ष्य' है। इस प्रकार विवेकशील प्राणी के लक्ष्य को पुरुषार्थ कहा जाता है। पुरुषार्थ चार है - धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। प्रथम तीन साधन एवं अंतिम साध्य है। सभी का समान महत्व है।

स्वधर्म (Svadharma) :— गीता के अनुसार गुण एवं कर्म के आधार पर जो चार प्रकार के वर्णों की रचना हुई है उन वर्णों के लिए निर्धारित कर्म करना ही स्वधर्म है। गीता मनुष्यों के स्वभाव में भिन्नता के मद्देनजर सामाजिक सामंजस्यता के लिए ऐसा आदेश देता है। जैसे— ब्राह्मण द्वारा शास्त्र का अध्ययन एवं अध्यापन, क्षत्रिय द्वारा जनता की बाह्य एवं आन्तरिक सुरक्षा, वैश्य द्वारा वाणिज्य एवं व्यापार करना तथा शूद्रों द्वारा चारों वर्णों का सेवा स्वधर्म है।

वर्णधर्म (Varnadharma) —
गीता में भगवान श्रीकृष्ण गुण-कर्म के आधार पर वर्ण का निर्धारण किये है जो ऋग्वेद के पुरुषसूक्त में भी वर्णित है। ये चार वर्ण है— ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। इन चार वर्णों का गुण के आधार पर कर्म का स्वपालन वर्णधर्म है। चारो अपने गुणों तथा कर्मों के अनुसार ज्ञान, सुरक्षा, वाणिज्य और कृषि तथा अंतिम तीनों वर्णों की सेवा करना वर्णधर्म है।

आश्रमधर्म (Asramadharma) :—
वैदिक काल के बाद उपनिषदकाल आते है। इसीकाल में आश्रमभेद किया गया है। सम्पूर्ण जीवन को चार आश्रमों में बाँटा गया है— ब्रह्मचर्य, गृहस्थ वानप्रस्थ और सन्यास। इन आश्रमों के अनुरूप क्रमशः कर्म का निर्धारण किया गया है। प्रथम पच्चीस वर्ष के उम्र में ब्रह्मचर्य का पालन करना तथा विद्या अध्ययन करना चाहिए। अगले पच्चीस वर्ष गृहस्थ आश्रम में पारिवारिक जीवन, धार्मिक कर्मकाण्ड करना चाहिए। तृतीय काल में वन में उपवास करना एवं प्रायश्चित करना चाहिए। तथा अंतिम अवस्था में गृहत्याग कर सभी प्रकार की कामनाओं को त्याग कर

(Niṣkāmakarma) —
गीता के अनुसार फलाकांक्षा का त्याग करके शुद्ध कर्तव्य की चेतना से किया गया कर्म निष्कामकर्म कहलाता है। इस प्रकार के आचरण के लिए इन्द्रियों एवं मन पर नियंत्रण आवश्यक है। इसमें प्रवृत्तिमार्ग और निवृत्तिमार्ग का समन्वय किया गया है।

लोकसंग्रह (Lokasamgraha) :—
गीता में लोककल्याण या ईश्वरीय लाभ के लिए किया गया कर्म लोकसंग्रह कहलाता है। अपने वर्णाश्रम धर्म के अनुसार निर्धारित कर्तव्यों को निष्कामभाव से मानवमात्र के हित के लिए करते रहने से मनुष्य सिद्धि प्राप्त करता है। भगवद्गीता में व्यावहारिक नैतिकता के स्तर पर लोकसंग्रह को परम पुरुषार्थ कहा गया है।

पंचशील (Pancasila) :—
पंचशील बौद्ध धर्म का निर्वाण प्राप्ति संबंधी नैतिक नियम है। शील का अर्थ है सत्कर्मों को करना और असत्कर्मों से बचना। अहिंसा, अस्तेय, सत्य, ब्रह्मचर्य तथा मदिरा पान का त्याग पंचशील है। पंचशील का पालन गृहस्थों तथा बौद्ध भिक्षुओं दोनों के लिए विहित है।

त्रिरत्न (Triratnas) :— जैनधर्म के अनुसार त्रिरत्न कैवल्य प्राप्ति के साधन है। ये है- सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान, सम्यक् चरित्र। तीर्थंकरों द्वारा बताए गए सिद्धान्तों के प्रति आस्था रखना सम्यक् ~~ज्ञान~~ दर्शन, सिद्धान्तों का अध्ययन करना तथा उसे समझना सम्यक् ज्ञान तथा उस सिद्धान्तों का अनुसरण करना सम्यक् चरित्र कहलाता है। "सम्यकदर्शनज्ञान चरित्र मोक्ष मार्गः"

ब्रह्मविहार (Brahmavihar) :—

बौद्ध धर्म में चित्त की मैत्री, करुणा, मुदिता और उपेक्षा इन चार उदात्त अवस्थाओं को ब्रह्मविहार कहा गया है। जीवों के हित को बढ़ाना मैत्री, उनके दुःख से दुःखी होना करुणा, उनके हर्ष से हर्षित होना मुदिता और सभी जीवों के प्रति समभाव हो जाना उपेक्षा है।